'निशिकांत' मृत रुढ़ियों से मुक्ति का प्रयास

सुरुचि गुप्ता
सहायक प्रवक्ता, हिन्दी
वैश्य महाविद्यालय,
भिवानी।

विष्णु प्रभाकर के साहित्य का मूल स्वर मनुष्य की पहचान और हर प्रकार के शोषण से मुक्ति का है। उन्होंने तीसरे दशक में लिखना शुरु किया था और जिर परिप्रेक्ष्य में उनका लेखन परवान चढ़ा, वह उन्हें आदर्शोन्मुख यथार्थवाद की ओर ही ले जा सकता था। लेकिन वे किसी दल या सिद्धान्त के पक्षधर नहीं बन सके।

उनका मानना है कि 'साहित्यकार स्वभाव से ही प्रगतिशील होता है। वह मूल्यों की परखता है, उनके सामने प्रश्न चिन्ह लगाता है। यह उसकी नियति है। चूंकि वह संवेदनशील है और यह निरंतर प्रवाहमान प्रक्रिया है, इसलिए वह किसी भी व्यवस्था का प्रचार मंत्री नहीं बन सकता।'[1]

'व्यक्ति की संवेदना जब मानव की संवेदना में रूपायित होती तभी कोई रचना साहित्य की संज्ञा पाती है। व्यक्ति की संवेदना से समष्टि की संवेदना तक की यह यात्रा परायी पीर से जुड़ने की यात्रा है। परायी आंच में तपकर ही मनुष्य पवित्र होता है। दर्दे सहने की यह यातना ही सृजन का मूल आधार है।'[2]

उपन्यास उनकी प्रिय विधा है और वे इस विधा में स्वयं को मुक्त और यथार्थ के अधिक निकट पाते हैं।

'निशिकांत' विष्णु प्रभाकर का प्रथम उपन्यास है। यह 1955 में प्रकाशित हुआ। इस उपन्यास में जीवन को जैसा उन्होंने देखा, वैसा ही सामने रखा है। यह उपन्यास लेखक के 1920 से 1939 तक के जीवनानुभवी और उस समय की देश की परिस्थितियों का आईना बनकर सामने आया है। मृत रूढ़ियों से मुक्ति की चाह इस उपन्यास का मूल स्वर है। यह उपन्यास निशिकांत नामक एक मध्यम वर्ग के नायक की गाथा है जो दफ्तर में क्लर्क है। वह देश और समाज के लिए अपना जीवन अर्पित करना चाहता है। बालक रूप में विष्णु जी ने जो अनुभव किया वह निशिकांत के चरित्र में उभारा है। विष्णु ने देश के मुक्ति संग्राम की कहानी सुनी। अपने कानों से सुना कि खद्दर पहनो, स्वराज्य मिलेगा।

निशिकांत का चरित्र विष्णु से अभिन्न है। निशिकांत प्रतिज्ञा करता है – 'मैं प्रतिज्ञा करता हूँ, कि मैं आज से (1) खद्दर पहनूँगा, (2) अछूतों को अपने समान मानूँगा, (3) राष्ट्रभाषा हिन्दी की सेवा करुँगा तथा (4) हिन्दू मुस्लिम एकता के लिए प्रयत्न करुँगा।'[3] एक बार बालक निशिकांत अपने चाचा के साथ जलसे में गए थे वहाँ एक बालक के भाषण से काफी प्रभावित हुए।

'बालक सुन्दर था। गोरा रंग, बड़ी–बड़ी आँखें, भरे हुए गाल। उसने धीरे–धीरे अटक–अटक कर कहा– मैं आपका बालक हूँ। मेरी उम्र पाँच साल है। मैं खद्दर पहनता हूँ। आप भी खद्दर पहने। वंदे मातरम्।[4] इस प्रकार वे सदैव के लिए खद्दर को अपना लेते हैं। अंग्रेजी सरकार की नौकरी करते हुए भी खद्दर भी नहीं त्यागते।'[4]

विष्णु जी निशिकांत के नास्तिक होने व आर्य समाजी होने के पीछे की घटना का वर्णन करते हैं। अपनी बहन की मृत्यु होने पर जिज्ञासा होती है कि भगवान ने उसे अपने पास बुला लिया? मरने पर आदमी को जला देते हैं तो वह भगवान के पास कैसे जाते हैं? इसी बीच एक ओर घटना से कांत का साक्षात्कार होता है । एक ज्योतिष ने कांत को बताया– 'कांत रे ! तू तो भइया फेल होगा। तुझ पर देवी का क्रोध है। ..... पर तू एक काम कर बेर। देवी के मंदिर में रोज सवेरे जलेबी चढ़ाया कर।'[5]

कांत को बाद में पता चला कि ज्योतिष का बेटा जलेबी स्वयं खा जाता है। रामू भी तो खाता है। यह सोच के देवी जी के सामने से पेड़ा उठा कर स्वयं खा लिया। 'वह सचमुच मीठा था। बड़ा अच्छा लगा। अगले दिन उसका परीक्षा फल भी निकल आया। वह सदा की भांति अपनी कक्षा में अव्वल आया। उस दिन कांत के मन में पहली बार नास्तिकता का उदय हुआ।'[6]

विष्णु जी ने युगीन परिवेश का चित्रण बड़ी कुशलता से किया है। उपन्यास के पात्र इस परिवेश के लिए चिंतित है बदलाव चाहते हैं परन्तु विवश भी है। साम्प्रदायिक दंगों से मल खिल रहते हैं। हिन्दू मुस्लिम में परस्पर वैमनस्य भाव है। एक दूसरे का छुआ नहीं खाते। नायक निशिकांत का आर्य समाज से इसलिए विश्वास उठ जाता है क्योंकि आर्य समाज हिन्दू मुसलमानों को बाँधने में सक्रिय नहीं अपितु मुसलमानों को पसन्द ही नहीं करता। मुसलमानों को शुद्ध करके हिन्दुओं में शामिल तो किया जाता है परन्तु आर्य समाज भी मुख्य धारा से

अभी भी बाहर ही है। हिन्दू मुस्लिम समस्या के साथ अन्य समस्या जाति पाति या छूआछात की है। उपन्यास में दो पात्र ऐसे हैं जिन्हें शुद्ध होकर हिन्दू तो बन जाते हैं पर रुढ़ियों के कारण अभी भी उन्हें अपना सदस्य स्वीकार नहीं किया गया धर्मपाल को काम नहीं मिलता। कोई अपने बर्तनों को छूने नहीं देता 'सांझ की जैसे ही पानी पीने का घड़ा उठाकर अंदर रखा तो वह (मालिक) एक बारगी लाल पीले तो उठे–तूने यह क्या किया हो। हिन्दू बन गया तो क्या हमारा धर्म बिगाड़ेगा। निकल जा यहाँ से। खाने को नहीं मिलता तो हिन्दू बन जाते हैं।'[7]

इसी तरह धर्म परिवर्तन करके हिन्दू बनी 'कम्पाउंडर पत्नी' नायक से पूछती है, 'आप खा लेते हैं, पर आप ही क्या दुनिया है? अकेला चना क्या भाड़ फोड़ता है?'[8]

इन्हीं सबको देखता हुआ नायक यह प्रतिज्ञा करता है कि वह किसी मुसलमान या नीची जाति की नारी से ही विवाह करेगा। उसकी एक प्रतिज्ञा द्वारा लेखक समाज की फैली मृत रुढ़ियों को तोड़ने की दिशा में प्रयास करता है। वह कमला से प्रेम करता है विवाह भी करना चाहता। परन्तु इतना साहस नहीं रखता क्योंकि जानता है कि उसकी माँ कमला को स्वीकार नहीं करेगी। उसका व्यक्तित्व क्रांतिकारी, सुधारक होने तक सीमित रहता है। कमला के प्रति आकर्षित होते हुए भी कांत अपनी कायरता का परिचय देता है। वह एक बुद्धिजीवी की तरह ही भीरू है। कमला को जब आर्य स्कूल से चरित्र पर संदेह होने के कारण निकाला गया तो वह उसे निर्दोष साबित होने के लिए साहसिक प्रयत्न नहीं करता अपितु स्वयं भी त्यागपत्र दे देता है।

कांत के चरित्र की बनावट को विष्णु प्रभाकर ने उपन्यास की भूमिका में इस प्रकार स्पष्ट किया है, 'कुछ आलोचकों ने निशिकांत को कायर कहा है। वह कायर न होता तो उपन्यास लिखा ही क्यों जाता? पर प्रश्न कायर का उतना नहीं है जितना उन परिस्थितियों से संघर्ष करने और उन्हें जीतने का है जो उसे कायर बना रही है। अंत में तो निशिकांत ऊपर ही उठा है।'[9] शक्ति व साहस निशिकांत से अधिक कमला में है। उपन्यास भी नायिका कमला वास्तव में ही साहस की प्रतिमूर्ति है।

कमला निशिकांत को समझाती है कि, 'संस्कारों की दास्ता के मुक्ति के लिए विद्रोह आवश्यक है। नही ंतो ज्ञान को वह नपुंसक बना देगी।[10] यही नहीं कमला निशिकांत के अर्न्तमन को झक झोरता ही है 'आप इतना लिखते हैं। क्या है, क्या होना चाहिए, सब कुछ

बताते हैं। क्रांति आपको प्रिय है, पर ये बातें आपके जीवन में कहीं नहीं। छाया भी नहीं, क्यों?'[11] अंत में कमला उससे कायर न होने का वचन लेती है। कांत नीच जाति की विधवा कमला से विवाह करने को प्रस्तुत हो जाता है। कमला के रुप में विष्णु प्रभाकर ने हिन्दी उपन्यास को एक ऐसी सशक्त विधवा नारी दी है जो समाज से सीधे भिड़ कर उसके कठोरतिकठोर प्रहारों को झेलती जाती है।

'कमला के संबंध में आपने जो विश्लेषण किया है वह बिल्कुल सही है, लेकिन उसका निर्माण करते समय, मेरे सामने कोई चरित्र नहीं था। उपचेतना में रहा हो तो मैं नहीं जानता। शरत से मैं प्रभावित हुआ हूँ ..... मैंने शरत् को पढ़ा, आर्य समाज में सक्रिय भाग लिया और स्वतंत्रता को भी मैंने बहुत पास से देखा है। इस सबका परिणाम कमला के चरित्र में प्रकट हुआ है। कमला के चरित्र द्वारा मैंने यह भी स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है कि आर्य समाज ने जहाँ नारी को मुक्ति दी है, वहाँ उसकी गतिविधियों पर अकुंश भी कम नहीं लगा। कमला सहज भाव से उन अकुंश की यातना को सहती है, लेकिन 'स्वप्नमयी' की तरह अपना बलिदान नहीं करती, अकुंशों को सहज भाव से लांघ जाती है।'[12] विष्णु प्रभाकर ने इस उपन्यास में अपने जीवन के अनुभवों को आधार बनाकर निशिकांत के माध्यम से समाज में नव चेतना जागृत करने की प्रेरणा दी है। 'जहां आर्य समाज ने मुझे प्रचलित मूल्यों के आगे प्रश्नचिन्ह लगाना सिखाया, गाँधी जी ने अन्याय का प्रतिकार करने की प्रेरणा दी वहीं शरत ने मुझे तथा कथित पतितों में देवत्व खोजने की शक्ति भी दी। गाँधी की अहिंसा और शरत की करुणा प्रेम के ही पर्यायवाची है।[13]

विष्णु प्रभाकर के इस प्रथम उपन्यास की सफलता इस बात में निहित है कि इसमें मध्यवर्गीय नारी की समस्याओं को केवल पारिवारिक संदर्भों में ही नहीं बल्कि पूरे देश और समाज के हवाले से उठाया गया है।

संदर्भ

1. संपादक कमल किशोर गोयन का विष्णु प्रभाकर : प्रतिनिधि रचनाए पृ0 267
2. वहीं वहीं
3. विष्णु प्रभाकर : निशिकांत पृ0 55
4. वहीं पृ0 39
5. वहीं पृ0 50
6. वहीं पृ0 51
7. वहीं पृ0 65
8. वहीं पृ0 93
9. वहीं दो शब्द
10. वहीं पृ0 299
11. वहीं पृ0 316
12. विष्णु प्रभाकर : मेरे साक्षात्कार पृ0 36–37
13. सम्पादक महीप सिंह विष्णु प्रभाकर : व्यक्ति और साहित्य
    मैं मेरा समय और रचना प्रक्रिया पृ0 24